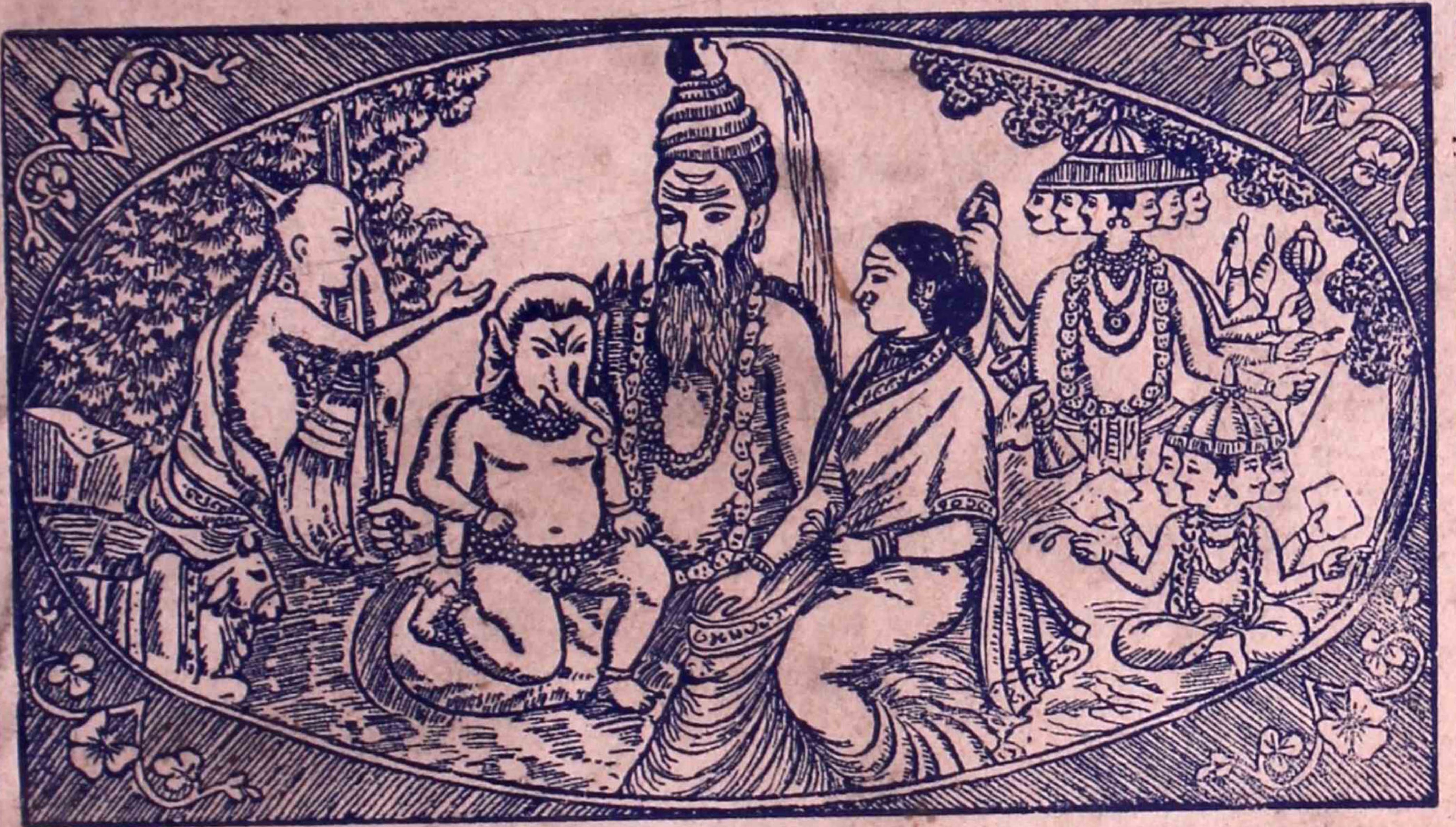


❀ श्रीः ❀

गङ्गालहरी पद्यात्मक टीका सहिता



टीकाकार—राधेलाल त्रिवेदी
कविरत्न—पं० रूपनारायण पाण्डेय द्वारा संशोधित



मुद्रक तथा प्रकाशक
(राजा) रामकुमार-प्रेस, बुकडिपो
उत्तराधिकारी—नवलकिशोर-प्रेस बुकडिपो लखनऊ.

सन १९५५ ई०]

मूल्य १=)

गंगा-भक्तशिरोमणि

पण्डितराज जगन्नाथजी का परिचय

(१)

सरस्वती के वरद पुत्र, सुन्दरता से मुखचन्द्र खिला ।
'पण्डितराज' खिताब उन्हें था दिल्ली के दरबार मिला ॥
यौवन में प्रभुत्व जो पाया, तबियत भी रंगीन हुई ।
ब्याहा एक शाहजादी को, यही चूक संगीन हुई ॥

(२)

दुलहिन ले काशी को लौटे कहीं न कुछ सत्कार हुआ ।
ब्राह्मणवंश सदा का त्यागी घर ही से बहिष्कार हुआ ॥
जी भर-भर सबको समझाया प्रायश्चित्त पूजा कीनी ।
पर लाये थे यवनकुमारी कोई न बात कुछ चित दीनी ॥

(३)

धर्म सनातन के थे पक्के सभी ओर देखा भगड़ा ।
धर्ममूल श्रीगंग-चरण को आतुर होकर जा पकड़ा ॥
पूत कपूत निकल जाता है मातु कुमातु न होती है ।
फँसा विपद में, फिरुँ तिरस्कृत धर्म-मातु, क्या सोती है ॥

(४)

आराधन कर देवनदी का अति प्रसन्न उनको कीना ।
खोज-खोजकर धर्मग्रन्थ उत्तर विरोधियों को दीना ॥
फिर भी बढ़ता देख दुराग्रह कहा न हम बोलें ज्यादा ।
माता की किरपा हो जाये चमत्कार एक दिखला दे ॥

(५)

ऐंठ रहे पंडित अभिमानी अब थे आप स्वयं ऐंठे ।
घाट पुनीत पंचगंगा के बावनवीं सीढ़ी बैठे ॥
लिये हुए गोदी में दुलहिन 'गंगालहरी' गान किया ।
हृदय कंठ के मधुर स्वरों ने वाद्यों का स्थान लिया ॥

(६)

दृढ़ सेवक माता के ठहरे भक्ति-लहर दम—दम बढ़ती ।
'लहरी' का सुन एक छन्द गंगा भी इक सीढ़ी चढ़ती ॥
बावन छन्द हुए जब पूरे बावन सीढ़ी चढ़ि आई ।
दोनों को ले गोदी चूमा हाथ फेर अति हरषाई ॥

(७)

बोलीं यह मेरी लीला थी तुझको इतना कष्ट मिला ।
मुझको दिखलाना जग को था जाग्रत् मेरी सदा कला ॥
स्रोत सभी शुभ कर्मों की हूँ तूने तो हैं बहुत किये ।
आशिष मेरी नित रहती है धर्म सनातन सदा जिये ॥

(८)

तू सच्चा है भक्त वत्स अब अमर लोक को जायेगा ।
भाग्यवती वर बधू सहित अतिशय आनन्द मनायेगा ॥
अरु वे नर जिनको लीलावश तव निन्दा का पाप लगा ।
तर जायेंगे न्हाइ न्हाइ धर ध्यान सदा मेरा सुभगा ॥

(९)

गंगभक्ति से जगन्नाथ यों प्रस्तुत किये प्रमाण नये ।
स्तोत्रश्रेष्ठ गंगालहरी का छोड़ों के हित छोड़ गये ॥
गा गाथा गंगाभक्तों की आनन्दों की मिसरी घोली ।
राधेलाल प्रेम से मन से गंगाजी की जय बोली ॥

बोली श्रीगंगाजी की जय

गंगे, हर, हर, हर ।

टीकाकार की विनय

(१)

करि प्रणाम श्रीजगन्नाथ को चरणचिह्न उनके पाये ।
मूल सहारा ले तिनका ही भाषा छन्द स्वयं गाये ॥
राधेलाल त्रिवेदी ने जब गंगाजी का ध्यान धरा ।
हुआ अनुग्रह तरनतारिनी चर्मरोग घनघोर हरा ॥

(२)

काम आयो बैद ना हकीम कोऊ डाक्टर
सात आठ वर्ष बीते भेलते मुसीबतें
जाबे जोग कहूँ नाहिं, घृणा दृष्टि देखे जाहिं
छाँड़ि गंगतीर ठौर कोऊ ना सुनावतें ॥
पैसा हूँ गँवायो अरु हाथ पाँय तोरे तोऊ
चर्मरोग बाढ़यो सुनी कैसी का कहावतें ।
धन्य है उदार, गंगधार, पापी तार तोहिं
कर गहि खँच्यो दुःख-सागर के डूबतें ॥

(३)

कलि काल के बीच प्रतच्छ है मात,
जो नीच कपूत को आदर देति है ।

जन देखि दुखी शरणागत पूत
 बनाय के निर्मल गोद में लेति है ॥
 सब हारे बखानत हैं महिमा
 सभी शास्त्र पुराण कहैं नित नेति है ।
 तुम दीन्यो है दास-सरीर सुधारि
 बताओ तो प्रेम कबै चित चेति है ॥

(४)

गंगे को ध्यान है मुख्य सदा
 नित भागीरथी उठि प्रात मनाऊँ ।
 खान में, पान में, पूजन में
 बस देवनदी के सदा गुन गाऊँ ॥
 दीन्हे हैं मेरे दरिद्र मिटा
 अब छुँडि के मातु कहाँ तोहि जाऊँ ।
 है बिनती कर जोरि यही
 प्रिय दर्शन तेरे बिना श्रम पाऊँ ॥

(५)

श्री गंगाजी की जय बोलो बस काम यही है चंगा ।
 भोले को दिन रात मनाओ, हृदय नहाकर गंगा ॥ १ ॥
 गंगा तट पर बास करूँ मैं, गोता रोज लगाऊँ ।
 तृष्णा से हो रहित सदा शिव, पूजा भेंट चढ़ाऊँ ॥ २ ॥

अन्त समय में दर्शन करता, गंगा नाम पुकारूँ ।

पापहरण गंगाजल पीकर अन्तिम बुद्धि सुधारूँ ॥ ३ ॥

गंगाजल का एकमात्र कण, सारे पाप मिटाता।

पापनाशिनी की महिमा को, रे मन, तू क्या गाता ॥ ४ ॥

अहो ईश्वरी त्रिभुवन माता, बचा नरक से लीजै ।

पापभार के दूर हटा, बैकुण्ठ बास ही दीजै ॥ ५ ॥

महायात्रा के उत्सव में, भक्ती भाव जगाना ।

श्री गंगाजी की जय बोलो, रोम रोम से गाना ॥ ६ ॥

बाग बनारस लखनपुरी में, गंगे भाव जगाया ।

राधेलाल त्रिवेदी ने, अनुवाद किया मन भाया ॥ ७ ॥

दो सहस्र नौ सभ्वत में, उल्लास भरी होली आई ।

पूर्ण किया यह लेख भेंट को, जय बोलो गंगे माई ॥ ८ ॥

मातु गंगे, हर, हर, हर

कानून १३ अन्तर्गत निम्न कानून कि निर्देशी दंडित कानून

ਸ੍ਰੀਮਤਿ ਸੁਖਾਗਤੀ ਜੀ ਦੇ ਪ੍ਰਦੇਹ ਵਿਚੋਂ ਸ੍ਰੀਮਤਿ ਸੁਖਾਗਤੀ ਜੀ ਦੇ ਪ੍ਰਦੇਹ ਵਿਚੋਂ

6. 100000 100000 100000 100000 100000

186 श्री श्री १०८ स्वामीजी महाराज महाराज महाराज महाराज महाराज

(1) 1971

सिद्धि, १५ मार्च (१९७९)

विशेषतः अत्रादिप्रमाणानुसारं—
अत्रादिप्रमाणानुसारं

1900-1901

आवश्यक सूचना

पंडित राधेलाल त्रिवेदी भूतपूर्व इन्सपेक्टर शॉर्टहैंड रिपोर्टर की अन्य निम्नांकित पुस्तकें भी हमारे यहाँ मिलती हैं:—

१—कीर्तनमाहात्म्य—इसमें राम नाम माहात्म्य, एकादश प्रश्न और उनके उत्तर, श्रीराम न क्यों फिर मिल जायँ ? नाम जाप श्रीराम बाण औषधि है आदि अनेक भक्तिभाव पूर्ण कविताएँ बड़ी मनोहर हैं। मूल्य =)

२—अमृत गुटका—इसमें बंसीधर की घर घर में रासलीला, गीतासार, हरिस्थापना, गुरु उपदेश, त्रिवेणी-स्नान, बेलीन भवानी, शिवदर्शन, और शिवाष्टक शीर्षक बड़ी ही आनन्ददायिनी कविताएँ हैं। मूल्य =)

३—श्री ब्रह्माक्षरप्रकाश अथवा हिन्दी शॉर्टहैंड मैनुअल—इसमें ब्रह्माक्षर ॐ से शॉर्टहैंड का सम्बन्ध बड़े मनोरंजक ढंग से दिखलाकर बड़ी ही सुगमता से पिटमैन सिस्टम पर हिन्दा शॉर्टहैंड सिखाने की सुन्दर विधि बतलाई है। पुस्तक हाईस्कूल और इन्टर के कोर्स में स्वीकृत है। इससे सुन्दर और सुगम इस विषय पर दूसरी पुस्तक नहीं है। मूल्य ४)

४—कुंजी श्रीब्रह्माक्षरप्रकाश—इसकी सहायता से विद्यार्थी बिना अध्यापक के भी हिन्दी शॉर्टहैंड सीख लेता है। मूल्य १।।)

(राजा) रामकुमार-प्रेस, बुकडिपो,
उत्तराधिकारी—मवलकिशोर-प्रेस, बुकडिपो
पोस्टबक्स नं० १५२, हजरतगंज बखनऊ,

अथ श्रीगंगालहरी प्रारभ्यते



(१)

समृद्धं सौभाग्यं सकल वसुधायाः किमपि तन्
महैश्वर्यं लीलाजनितजगतः खण्डपरशोः ।
श्रुतीनां सर्वस्वं सुकृतमथमूर्तं सुमनसां
सुधा सौन्दर्यं ते सलिलमशिवं नः शमयतु ॥

(१)

सारे पृथ्वी-मण्डल का जो एक महत् सौन्दर्य स्वरूप ।
जगत-जनक भगवान सदाशिव का जो है ऐश्वर्य अनूप ॥
वेदों का सर्वस्व, देवताओं के जिसमें पुण्य भरे ।
अमृत-तुल्य वह मधु जल तेरा पाप हमारे दूर करे ॥

[२]

(२)

दरिद्राणां दैन्यं दुरितमथ दुर्वासनहृदां
द्रुतं दूरीकुर्वन् सकृदुपगतो दृष्टिसरणिम् ।
अपिद्रागाविद्याद्रुमदलनदीक्षागुरुरिह
प्रवाहस्ते वारां श्रियमयमपारां दिशतु नः ॥

(२)

केवल एक बार दर्शन से दुसह दीनता जाती है ।
पापात्मा पापी को निर्मल बिठला पास बनाती है ॥
वृक्ष अविद्या का उखाड़ता गुरुमन्त्र के सदृश जो ।
जलप्रवाह तेरा ये माता दे अपार लक्ष्मी मुझको ॥

(३)

स्मृतिं याता पुंसामकृतसुकृतानामपि च या
हरत्यन्तस्तन्द्रां तिमिरमिव चण्डांशुसरणिः ।
इयं सा ते मूर्तिः सकलसुरसंसेव्यसलिला
ममान्तः सन्तापं त्रिविधमपि पापञ्च हरताम्

(३)

सूर्यकिरण जैसे जग में आ अन्धकार को हरती है ।
याद तुम्हारी आ हिरदे में नष्ट पाप को करती है ॥
सभी देवताओं से सेवित कर करुणा जो दुःख हरे ।
त्रिविध ताप मेरे, तब मूर्ति, गंगा माता, दूर करे ॥

[३]

(४)

तवालम्बादम्ब स्फुरदलघुगर्वेण सहसा
मया सर्वेऽवज्ञासरणिमथ नीताः सुरगणाः ।
इदानीमौदास्यं यदि भजसि भागीरथि तदा
निराधारो हा रोदिमि कथय केषामिहपुरः ॥

(४)

अम्बे, पा अवलम्ब तुम्हारा अहंकार चित में लीना ।
सब देवों का मैंने एकदम तिरस्कार ही कर दीना ॥
भागीरथी, समय ऐसे पर जो निराश मैं होऊँगा ।
तुम्हीं बताओ, मा, फिर जाकर किसके आगे रोऊँगा ॥

(५)

अपि प्राज्यं राज्यं तृणमिव परित्यज्य सहसा
विलोलद्वानीरं तव जननि तीरं श्रितवताम् ।
सुधातः स्वादीयः सलिलमिदमातृसि पिबतां
जनानामानन्दः परिहसति निर्वाणपदवीम् ॥

(५)

जननी, छोड़ बड़े राज्यों को बड़भागी जो तट सेवें ।
काँसादिक लहराते जिसमें उत्तम अमृत जल पीवें ॥
उनके आनन्दों की सीमा कहो, कौन वर्णन कर दे ।
मोक्ष-सुखों की क्या बिसात जो उसके आगे मन भर दे ॥

[४]

(६)

उदञ्चन्मार्तण्डस्फुटकपटहेरम्बजननी-
कटाक्षव्याक्षेपक्षणजनितसंचोभनिवहाः ।
भवन्तु त्वङ्गन्तो हरशिरसि गङ्गातनुभुव-
स्तरङ्गाः प्रोत्तुङ्गा दुरितभयभङ्गाय भवताम् ॥

(६)

सूर्योदय के समय पार्वती ने कटाक्ष से जब देखा ।
उपजा क्षोभ क्षणिक हिरदे में पर विनोद कर तुम लेखा ॥
जो शिव-जटा बीच हर्षित हो सदा खेलती मातु रहें ।
ऊँची ऊँची लहरें उनकी पाप आपके दूर करें ॥

(७)

प्रभाते स्नातीनां नृपतिरमणीनां कुचतटी-
गतो यावन्मातर्मिलति तवतोयैर्मृगमदः ।
मृगास्तावद्वैमानिकशतसहस्रैः परिवृताः
विशन्ति स्वच्छन्दं विमलवपुषो नन्दनवनम् ॥

(७)

राजाओं की रमणी आकर प्रात करें तव जल में स्नान ।
कुचलिपटी कस्तूरीवाले मृग पाते हैं मुक्ति महान ॥
देवों के सँग चढ़ विमान वे क्या क्या मौज उड़ाते हैं ।
करने को आनन्द यहाँ से नन्दनवन को जाते हैं ॥

[५]

(८)

स्मृतं सद्यःस्वान्तं विरचयति शान्तं सकृदपि
प्रगीतं यत्पापं भटिति भवतापश्च हरति ।
इदं तद्गङ्गेति श्रवणरमणीयं खलु पदं
मम प्राणप्रान्ते वदनकमलान्तर्विलसतु ॥

(८)

एक बार सुमिरन कर जिसका चित्त शान्त हो जाता है ।
एक बार उच्चारण से तापों को दूर भगाता है ॥
सुनने में है परम मधुर 'गङ्गा' पद मन को भाता है ।
रहे विराजित मुख में हरदम सेवक यही मनाता है ॥

(९)

यदन्तः खेलन्तो बहुलतरसन्तोषभरिताः
न काका नाकाधीश्वरनगरसाकाङ्क्षमनसः ।
निवासाल्लोकानां जनिमरणशोकापहरणं
तदेतत्ते तीरं श्रमशमनधीरं भवतु नः ॥

(९)

तव तट में करते विहार अति आनन्दित होकर विचरें ।
कौए भी संतोषमगन हो चाह स्वर्ग की नहीं करें ॥
तीर-निवासी भक्तों के जो जन्म-मरण के शोक हरे ।
परम मनोहर मा, तेरा तट मेरे भी दुख दूर करे ॥

[६]

((१०))

न यत् साक्षाद्देवैरपि गलितभेदैरवसितं
न यस्मिन् जीवानां प्रसरति मनोवागवसरः ।
निराकारं नित्यं निजमहिमनिर्वासित तमो
विशुद्धं यत्तत्त्वं सुरतटिनि तत्त्वं न विषयः ॥

((१०))

ऐसा तत्त्व विशुद्ध आपका वर्णन वेद न कर पाते ।
मन वाणी से अगम अगोचर निराकार कह रह जाते ॥
देवनदी, महिमा अपार तब माया का तम हरती हो ।
नित्य करो कल्याण जगत का अन्तरिक्ष में रहती हो ॥

((११))

महादानैर्ध्यानैर्बहुविधवितानैरपि च यत्
न लभ्यं घोराभिः सुविमलतपोराजिभिरपि ।
अचिन्त्यं तद्विष्णोः पदमाखिलसाधारणतया
ददाना केनासि त्वमिह तुलनीया कथय नः ॥

((११))

घोर तपस्या से जो दुर्लभ उच्च कोटि के दानों से ।
बहु प्रकार के यज्ञों से भी महा कठिन जप-ध्यानो से ॥
ऐसा परम अचिन्त्य विष्णु पद तुरत सभी को देती हो ।
अब तुम स्वयं बताओ, माता, तुलना कहाँ तुम्हारी हो ॥

(१२)

नृणामीक्षामात्रादपि परिहरन्त्या भवभयं
 शिवायास्ते मूर्तेः क इह बहुमानं निगदतु ।
 अमर्षम्लानायाः परममनुरोधं गिरिभुवो
 विहाय श्रीकण्ठः शिरसि नियतं धारयति याम् ॥

(१२)

पार्वती हो दुख से कातर शिवजी से, अनुरोध करें ।
 हे कल्याणी, फिर भी शङ्कर शिर पर तुमको सदा धरें ॥
 देखो जिसको कृपादृष्टि कर उसे न फिर भवभय रहता ।
 ऐसी महिमावाली हो तुम किससे वर्णन हो सकता ॥

(१३)

विनिन्द्यान्युन्मत्तैरपि च परिहार्याणि पतितै-
 रवाच्यानि व्रात्यैः सपुलकमपास्यानि पिशुनैः ।
 हरन्ती लोकानामनवरतमेनांसि कियतां
 कदाप्यश्रान्ता त्वं जगति पुनरेका विजयसे ॥

(१३)

उन्मत्त नरों से जो निन्दित पतितों ने भी जिनको त्यागा ।
 जो कि असंस्कृत साधारण नर जिन्हें कहें सब हतभागा ॥
 ऐसे अगणित नीचों को नित सदा उबारो, नहिं थकती हो ।
 महा विजयिनी हो सब जग में मातु, विराजित रहती हो ॥

(१४)

स्खलन्ती स्वर्लोकादवनितलशोकापहतये
जटाजूटग्रन्थौ यदसि विनिबद्धा पुरभिदा ।
अये निर्लोभानामपि मनसि लोभजनयतां
गुणानामेवायं तव जननि दोषः परिणतः ॥

(१४)

खिसकी थीं तुम स्वर्गलोक से पृथ्वीतल का शोक हरा ।
मार्ग बँधी शिव-जटाजूट में अद्भुत घटनाचक्र फिरा ॥
लोभहीन लोगों के चित यों दरस-लोभ उत्पन्न किया ।
इस प्रकार मा, तेरे गुण ने एक दोष का रूप लिया ॥

(१५)

जडानन्धान्पङ्गून्प्रकृतिवधिरानुक्लिविकलान्
ग्रहग्रस्तानस्ताखिलदुरितनिस्तारसरणीन् ।
निलिम्पैर्निर्मुक्तानामपि च निरयान्तर्निपततो
नरानम्ब त्रातुं त्वमिह परमं भेषजमसि ॥

(१५)

अंधे पंगु जनम के बहरे जड़ गूँगे ग्रह-ग्रस्त सभी ।
जिनके पाप विचार देवगण करें नहीं उद्धार कभी ॥
ऐसे नर अरु अपर नीच जो पड़े नरक में सड़ते हैं ।
उनकी सर्वश्रेष्ठ औषध यह, नहा स्वर्ग में चढ़ते हैं ॥

[६]

(१६)

स्वभावस्वच्छानां सहजशिशिराणामयमपा-
मपारस्तेमातर्जगति महिमा कोऽपि जयति ।
मुदा यं गायन्ति द्युतलमनवद्यद्युतिभृतः
समासाद्याद्यापि स्फुटपुलकसान्द्राः सगरजाः ॥

(१६)

है महिमा स्वभाव से न्यारी स्वच्छ और शीतल जल की ।
अम्बे, तेरे नीर बसी है महा देन जग मङ्गल की ॥
बैठ सगरसुत स्वर्गलोक में जयजयकार मनाते हैं ।
गद्गद वाणी से पुलकित हो तव गुण-गरिमा गाते हैं ॥

(१७)

कृतक्षुद्रैर्नस्कानथ भटिति सन्तप्तमनसः
समुद्धतुं सन्ति त्रिभुवनतले तीर्थनिवहाः ।
अपि प्रायश्चित्तप्रसरणपथातीतचरितान्
नरानूरीकतुं जगति खलु जागर्ति भवती ॥

(१७)

तीर्थ बहुत से हैं इस जग में जो कि उबारें पश्चात्तापी ।
पर प्रायश्चित्त नहीं है जिनका, तार न सकते वे पापी ॥
तुम करने को उद्धार उन्हीं का निसदिन माता बहती हो ।
निज प्रेम-गोद में बिठलाने को ही सचेष्ट नित रहती हो ॥

[१०]

(१८)

निधानं धर्माणां किमपि च विधानं नवमुदां
प्रधानं तीर्थानाममलपरिधानं त्रिजगतः ।
समाधानं बुद्धेरथ खलु तिरोधानमधियां
श्रियामाधानं नः परिहरतु तापं तव वपुः ॥

(१८)

तीर्थ प्रधान, विधान सुखों का त्रिभुवन को सुख देता है ।
समाधान हो जिससे मति का और कुमति को ठक लेता है ॥
धर्म और सम्पत्ति कोष संतोष सदा चित बीच करे ।
जलरूपी तेरा शरीर यह मेरा सब सन्ताप हरे ॥

(१९)

पुरोधावं धावं द्रविणमदिराघूर्णित दृशां
महीपानां नानातरुणतरखेदस्य नियतम् ।
ममैवायं मन्तुः स्वहितशतहन्तुर्जडधियो
वियोगस्ते मातर्यदिह करुणातः क्षणमपि ॥

(१९)

नित नव कष्ट उठाये, नाचा नरपालों की सेवा में ।
उनका मुँह ताका मानवता का फल मिला न मेवा में ॥
यद्यपि फँसकर जन्म गँवाया और इसी से अब रोऊँ
पर मुझको वरदे अब माता, विलग न क्षण को भी होऊँ ॥

[११]

(२०)

मरुल्लीलालोलल्लहरिलुलिताम्भोजपटल-
स्खलत्पांशुव्रातच्छुरणविलसत्कौंकुमरुचिः ।
सुरस्त्रीवक्षोजक्षरदगरुजम्बालजटिलं
जलं ते जंबालं मम जननजालं जरयतु ॥

(२०)

कुंकुम की शोभा देती रज झड़ कमलों के हलने से ।
कस्तूरी बहती छुट छुटकर देववधू तन मलने से ॥
ऊँची लहरें उठें वायु से बह सिवार जल शुद्ध करे ।
माता, तेरा ये पवित्र जल जन्म-मरण का दुःख हरे ॥

(२१)

समुत्पत्तिः पद्मारमणपदपद्मामलनखा-
न्निवासः कन्दर्पप्रतिभटजटाजूटभवने ।
अथायं व्यासङ्गो हतपतितनिस्तारणविधौ
न कस्मादुत्कर्षस्तव जननि जागर्ति जगति ॥

(२१)

जननी, तुम उत्पन्न हुई हो हरिपद के निर्मल नख से ।
जटाजूट में शिवशंकर के वास तुम्हारा है सुख से ॥
करती हो व्यवसाय तारने का दुनिया के सब पापी ।
क्यों न रहे जाग्रत महिमा फिर अचल तुम्हारी जगव्यापी ॥

[१२]

(२२)

नगेभ्यां यान्तीनां कथय तटिनीनां कतमया
पुराणां संहर्तुः सुरधुनि कपदोर्धिरुरुहे ।
कया वा श्रीभर्तुः पदकमलमक्षालि सलिलै-
स्तुलालेशो यस्यां तव जननि दीयेत कविभिः ॥

(२२)

बहुत नदी निकलीं पर्वत से, क्या शिवजटा बसी कोई ।
कौन नदी हरि के चरणों को जल से धो सुख से सोई ॥
कविगण करें तुम्हारी तुलना किससे, कौन नदी ऐसी ।
निश्चय नहीं कहों कोई है, एक तुम्हीं हो तुम जैसी ॥

(२३)

विधत्तां निःशंकं निरवधिसमाधिं विधिरहो
सुखं शेषे शेतां हरिरविरतं नृत्यतु हरः ।
कृतं प्रायश्चित्तैरलमथ तपोदानयजनैः
सवित्री कामानां यदि जगति जागर्ति भवती ॥

(२३)

जब तक तुम माता भक्तों की सभी कामना पूर्ण करो ।
ब्रह्मा भले समाधि लगा लें, भक्तजनो, तुम नहीं डरो ॥
विष्णु शेषशय्या पर सोवें, शिव भी ताण्डव करें सही ।
प्रायश्चित्त-यज्ञ-दानादिक की आवश्यकता नहीं रही ॥

(२४)

अनाथः स्नेहाद्रां विगलितगतिः पुण्यगतिदां
पतन्विश्वोद्धर्त्री गदविदलितः सिद्धभिषजम् ।
सुधासिन्धुं तृष्णाकुलितहृदयो मातरमयं
शिशुः संप्राप्तस्त्वामहमिह विदध्याः समुचितम् ॥

(२४)

हे माता, मैं हूँ अनाथ, गतिहीन और हूँ पतित बड़ा ।
तृष्णा रोगप्रपीडित व्याकुल तेरे तट पर आन पड़ा ॥
विश्वोद्धारक सुधासिंधु सी सिद्ध वैद्य सम रोग हरो ।
आर्द्र हृदय हो मम स्नेह से जो समुचित हो वही करो ॥

(२५)

विलीनो वै वैवस्वत नगरकोलाहलभरो
गतादूतादूरं क्वचिदपि परेतान्मृगयितुम् ।
विमानानां व्रातो विदलयति वीथीर्दिविषदां
कथा ते कल्याणी यदवधिमहीमण्डलमगात् ॥

(२५)

जब से कथा पुनीत तुम्हारी पृथ्वीतल में हम गाते ।
जाते हुए विमान स्वर्ग को झुंड झुंड हैं मँडराते ॥
शान्त हुई यमपुरी यातना नहीं उसमें पापी पाते ।
यम के दूत दूर ही रहते नहीं सताते नगचाते ॥

[१४]

(२६)

स्फुरत्कामक्रोधप्रबलरससञ्जातजटिल-
ज्वरज्वालाजालज्वलितवपुषां नः प्रतिदिनम् ।
हरन्तां संतापं कमपि मरुदुल्लासिलहरि-
च्छटाचञ्चत्पाथः कणसरणयो दिव्यसरितः ॥

(२६)

सरिता-स्वर्ग पुनीत गंग के नन्हे कण का दिव्य समूह ।
प्रबल वायु के झोंकों ने जो रचे लहर में सुन्दर व्यूह ॥
शमन ताप को करें हमारी कामादिक ज्वर की ज्वाला ।
यही एक उत्तम प्रयोग है सदा शान्ति देनेवाला ॥

(२७)

इदं हि ब्रह्माण्डं सकलभुवनाभोगभवनं
तरंगैर्यस्यान्तर्लुठति परितस्तिन्दुकमिव ।
स एष श्रीकण्ठप्रविततजटाजूटजटिलो
जलानां संघातस्तव जननि पापं हरतु नः ॥

(२७)

हे माता, जिसके अन्तर्गत यह ब्रह्माण्ड विश्व-व्याप्य ।
रहे लुढ़कता गेद सदृश तव लहरों की ठोकर खा-खा ॥
श्रीशंकर के जटाजूट में जटिल हुई हिय द्वर्ष भरे ।
ऐसी यह जलराशि, आपकी पापों के गिरि चूर करे ॥

(२८)

त्रपन्ते तीर्थानि त्वरितमिह यस्योद्धृतिविधौ
 करं कर्णे कुर्वन्त्यति किल कपालिप्रभृतयः ।
 इमं तं मामम्ब त्वमियमनुकम्पाद्र्हृदया
 पुनाना सर्वेषामघमथनदर्पं दलयसि ॥

(२८)

सभी तीर्थ लज्जित हो जाते सुन मेरी उद्धार-पुकार ।
 सभी देवता शम्भु आदि कर देते हैं अस्वीकार ॥
 तुम ही होकर आर्द्र हृदय करती पवित्र हो मुझ सा दीन ।
 देवों को कर दिया आपने अघ-उद्धारण गर्व-विहीन ॥

(२९)

श्वपाकानां व्रातैरमितविचिकित्साविचलितैः
 विमुक्कानामेकं किल सदनमेनः परिषदाम् ।
 अहो मामुद्धतुं जननि दृढयन्त्याः परिकरं
 तव श्लाघां कतुं कथमिव समर्थो नरपशुः ॥

(२९)

होने का उद्धार किसी विधि नहीं उपाय कोई पाया ।
 हुआ भयानक ऐसा पापी चाण्डालों ने ठुकराया ॥
 माता, जब तू कमर कस रही पापभार मेरा हर ले ।
 है फिर कहाँ समर्थ मनुज-पशु महिमा का वर्णन कर ले ॥

[१६]

(३०)

न कोऽप्येतावन्तं खलु समयमारभ्य मिलितो
यदुद्धारादाराद्भवति जगतो विस्मयभरः ।
इतीमामीहां ते मनसि चिरकालं स्थितवती-
मयं संप्राप्तोऽहं सफलयितुमम्ब प्रणयतः ॥

(३०)

खोज रही थीं माता, तुम भी इक ऐसे पापी ठग को ।
जब उद्धार करो तुम उसका विस्मय हो सारे जग को ॥
बहुत दिनों की इच्छा तेरी आज समझ मैं पाया हूँ ।
करूँ पूर्ण चिरकाल कामना प्रेम हृदय भर लाया हूँ ॥

(३१)

श्ववृत्तिव्यासङ्गो नियतमथ मिथ्याप्रलपनं
कुतर्केष्वभ्यासः सततपरपैशुन्यमननम् ।
अपि श्रावं श्रावं मम तु पुनरेवं विधगुणा-
नृतेन्बत्को नाम क्षणमपि निरीक्षेत वदनम् ॥

(३१)

श्वानवृत्ति से खोजूँ भोजन, मिथ्या भाषण करता हूँ ।
नित कुतर्क का आश्रय लेकर चुगली में चित धरता हूँ ॥
तेरे सिवा कौन है मा, जो मुँह मेरा क्षण भर देखे ।
सुन दुर्गुण दूषित विचार फिर उन्हें तुच्छ करके लेखे ॥

(३२)

विशालाभ्यामाभ्यां किमिह नयनाभ्यां खलु फलं
न याभ्यामालीढा परमरमणीया तव तनुः ।
अयं हि न्यक्कारो जननि मनुजस्य श्रवणयो-
र्ययोर्नान्तर्यातस्तत्र लहरिलीलाकलकलः ॥

(३२)

जो रमणीय रूप के दर्शन नहीं किये तो पाया क्या ।
इन विशाल नयनों से मैंने मैया, लाभ उठाया क्या ॥
लाख बार धिक्कार उसे है महा अधम है वह मानव ।
सुना न जिसने कभी कान से तेरी लहरों की कलरव ॥

(३३)

विमानैः स्वच्छन्दं सुरपुरमयन्ते सुकृतिनः
पतन्ति द्राक्पापा जननि नरकान्तः परवशाः ।
विभागोऽयं तस्मिन्नशुभचयमूर्ते जनपदे
न यत्र त्वं लीलादलितमनुजाशेषकलुषा ॥

(३३)

महा अशुभ वह देश जहाँ पर धारा नहीं तुम्हारी है ।
बँधकर जाना सदा वहाँ से नरकलोक को जारी है ॥
किन्तु जहाँ तुम तरनतारनी पापनाशिनी माता हो ।
नहीं एक भी ऐसा पापी, सीधा स्वर्ग न जाता हो ॥

[१८]

(३४)

अपि घनन्तो विप्रानविरतमुशन्तो गुरुसतीः
पिबन्तो मैरेयं पुनरपि हरन्तश्च कनकम् ।
विहाय त्वय्यन्ते तनुमतनुदानाध्वरजुषा-
मुपर्यम्बक्रीडन्त्यखिलसुरसम्भावितपदाः ॥

(३४)

ब्राह्मण-हत्या मद्य-पान गुरुनारि-गमन सोने के चोर ।
ऐसे कलुषित जन तट आकर कभी देह दें अपनी छोड़ ॥
यज्ञ-दान करनेवालों से बढ़कर लोकों को पाते ।
करें विहार संग देवों के तेरे यश को वे गाते ॥

(३५)

अलभ्यं सौरभ्यं हरति सततं यः सुमनसां
क्षणादेव प्राणानपि विरहशस्त्रक्षतहृदाम् ।
त्वदीयानां लीलाचलितलहरीणां व्यतिकरात्
पुनीते सोऽपि द्रागहह पवमानस्त्रिभुवनम् ॥

(३५)

मस्त वायु जो हरे तुरत अनुपम सुगन्ध को फूलों से ।
विरही जन के प्राण निकाले हिय विदीर्ण कर शूलों से ॥
तेरी लहरों के संगम से खोकर वह सारा अभिमान ।
पल भर में पवित्र करता है तीन लोक को आप निदान ॥

(३६)

कियन्तः सन्त्येके नियतमिह लोकार्थघटकाः
परे पूतात्मानः कति च परलोकप्रणयिनः ।
सुखं शेते मातस्तव खलु कृपातः पुनरयं
जगन्नाथः शश्वत्त्वयि निहितलोकद्वयभरः ॥

(३६)

हैं मनुष्य ऐसे कुछ जग में करते रहते जो उपकार ।
योग साध आत्मा पवित्र कर कुछ जाते हैं स्वर्गद्वार ॥
किन्तु कृपा से तेरी माता जगन्नाथ अब धोता है ।
उभय लोक का भार सौंपकर आप शान्ति से सोता है ॥

(३७)

भवत्याहि व्रात्याधमपतितपाखण्डपरिषत्-
परित्राणस्नेहः श्लथयितुमशक्यः खलु यथा ।
समाप्येवं प्रेमो दुरितनिवहेष्वम्ब जगति
स्वभावोऽयं सर्वैरपि खलु यतो दुष्परिहरः ॥

(३७)

शरणागत के हो स्नेहवश जैसे तू रक्षक खल की ।
जातिहीन की, अधम पतित पाखण्डीजन के मंडल की ॥
वैसे ही मेरा मन, माता, लगा हुआ है पापों में ।
परिवर्तन कोई कर सकता क्या नैसर्गिक छापों में ॥

[२०]

(३८)

प्रदोषान्तर्नृत्यत्पुरमथनलीलोद्धतजटा-
तटाभोगप्रेङ्खल्लहरिभुजसन्तानविधुतिः ।
बिलक्रोडक्रीडजलडमरुडङ्कारसुभग-
स्तिरोधत्तां तापं त्रिदशतटिनीताण्डवविधिः ॥

(३८)

संध्या को शिवजटा बीच लहरों की भुजा चलाती हो ।
लड़ें तरंगें जब ताण्डव में मानो ताल बजाती हो ॥
जल के बिल प्रवेश करने का कलकल ही डमरू डङ्कार ।
माता, तेरी ताण्डव विधि से हो सन्तापों का परिहार ॥

(३९)

सदैव त्वय्येवार्पितकुशलचिन्ताभरमिमं
यदि त्वं मामम्ब त्यजसि समयेऽस्मिन्सुविषमे ।
तदा विश्वासोऽयं त्रिभुवनतलादस्तमयते
निराधाराचेयं भवति खलु निर्व्याज करुणा ॥

(३९)

हे माता मैं छोड़ चुका हूँ कुशल-भार तुम पर सारा ।
सदा सर्वदा करना मेरा सभी भाँति से निस्तारा ॥
समय भयानक में क्या मुझ-से दीन पुरुष को छोड़ोगी ।
लोगों का विश्वास जायगा, निराधार करुणा होगी ॥

[२१]

(४०)

कपर्दादुल्लस्यप्रणयमिलदर्द्धाङ्गयुवतेः
पुरारेः प्रेखन्त्यो मृदुलतरसीमन्तसरणौ ।
भवान्या सापन्त्यस्फुरितनयनं कोमलरुचा
करेणा क्षिप्तास्ते जननि विजयन्तां लहरयः ॥

(४०)

उल्लुल जटा से लहरें तेरी केश भवानी लोक रहों ।
रुष्ट नेत्र सापत्न्य भाव जो कर कमलों से रोक रहों ॥
वाम अङ्ग शिव गौरी शोभित आप शीश पर यों विहरें ।
सदा विजयिनी हों, माता जीवनप्रदायिनी ये लहरें ॥

(४१)

प्रपद्यन्ते लोकाः कति न भवतीमत्र भवती-
मुपाधिस्तत्रायं स्फुरति यदभीष्टं वितरसि ।
शपे तुभ्यं मातमम तु पुनरात्मा सुरधुनि
स्वभावादेव त्वय्यमितमनुरागं विधृतवान् ॥

(४१)

सभी लोग इस जग के माता, शरण तुम्हारी आते हैं ।
कारण मनोकामना पूरण तुम ही से कर पाते हैं ॥
किन्तु चाहना उसकी कोई नहीं दास के मन में है ।
स्वाभाविक अनुराग तुम्हारे चरणों का जीवन में है ॥

[२२]

(४२)

ललाटे या लोकैरिह खलु सलीलं तिलकिता
तमो हन्तुं धत्ते तरुणतरमार्तण्डतुलनाम् ।
विलुम्पन्ती सद्यो विधिलिखितदुर्वर्णसरणिम्
त्वदीया सा मृत्स्ना मम हरतु कृत्स्नामपि शुचम् ॥

(४२)

बड़भागी मस्तक पर तेरी रज चढ़ जहाँ चमकती है ।
तेजोमय हो सूर्यरूप अज्ञान-तिमिर को हरती है ॥
अशुभ लेख ब्रह्मा के सब, जो भाग्य-पत्र से तुरत हरे ।
वह पावन रज, माता, तेरी मम शोकों को दूर करे ॥

(४३)

नरान्मूढांस्तत्तज्जनपदसमासक्रमनसो
हसन्तः सोल्लासं विकचकुसुमब्रातमिषतः ।
पुनानाः सौरभ्यैः सततमलिनो नित्यमलिनान्
सखायो नः सन्तु त्रिदशतटिनीतीरतरवः ॥

(४३)

तरुवर तेरे तट के मानों फूल खिलाकर हँसते हैं ।
उन मूढ़ों पर जो न कभी तीर्थों में जाकर बसते हैं ॥
जो सुगन्ध से करे तृप्त नित मलिन कलूटे भौंरों को ।
उन मित्रों की छाया में रह बनूँ हितैषी औंरों को ॥

[२३]

(४४)

यजन्त्येके देवान्कठिनतरसेवांस्तदपरे
वितानव्यासक्ता यमनियमरक्ताः कतिपये ।
अहं तुत्वन्नामस्मरणकृतकामस्त्रिपथगे
जगज्जालं जाने जननि तृणजालेन सदृशम् ॥

(४४)

महा कठिन देवों का कितने आराधन पूजन करते ।
कितने ही यम नियम साधते चित्त नित्य उनमें धरते ॥
किन्तु त्रिपथगे, एकमात्र, मैं नाम तुम्हारा जपता हूँ ।
इस माया जंजाल जगत को घास जाल सा गिनता हूँ ॥

(४५)

अविश्रान्तं जन्मावधि सुकृतकर्माज्जनकृतां
सतां श्रेयः कर्तुं कति न कृतिनः सन्ति विबुधाः ।
निरस्तालम्बानामकृतसुकृतानां तु भवतीं
बिनाऽमुष्मिललोके न परमवलोके हितकरम् ॥

(४५)

सुकृती के कल्याण कार्य में कुशल देवता हैं सारे ।
निरालंब पातकी तुम्हारे सिवा कौन माता, तारे ॥
छूट सके नहीं पाप भयङ्कर, जिसका नहीं गुजारा हो ।
उसका तो जग बीच तुम्हीं बस केवल एक सहारा हो ॥

[२४]

(४६)

पयः पीत्वा मातस्तव सपदि यातः सहचरै-
विमूढैः संरन्तुं क्वचिदपि न विश्रान्तिमगमम् ।
इदानीमुत्संगे मृदुपवनसंचारशिशिरे
चिरादुन्निद्रं मां सदयहृदये शायय चिरम् ॥

(४६)

कुछ विमूढ़ मित्रों की संगति में पड़कर पय पान किया ।
और बिहरने को मैं विचरा, विषयों का ही ध्यान किया ॥
शान्ति न पाई कहीं, नोद से व्याकुल हूँ मैं, दया करो ।
शीतल पवन गोद में अपनी मुझे सुलाकर ताप हरो ॥

(४७)

बधान द्रागेव द्रढिमरमणीयं परिकरं
किरीटे बालेन्दुं नियमय पुनः पन्नगगणैः ।
न कुर्यास्त्वं हेलामितरजनसाधारणधिया
जगन्नाथस्यायं सुरधुनि समुद्धारसमयः ॥

(४७)

सुन्दर पुष्ट कमर कस झटपट भाल लाल कर रोरी से ।
बालचंद्र का बाँध मुकुट ले अब नागों की डोरी से ॥
तिरस्कार मत करना माता, समझ एक साधारण नीच ।
आ पहुँचा उद्धार-काल है जगन्नाथ का तेरे बीच ॥

[२५]

(४८)

शरच्चन्द्रश्वेतां शशिशकलश्वेतालमुकुटां
करैः कुम्भाभोजे वरभयनिरासौ च दधतीम् ।
सुधाधाराकाराभरणवसनां शुभ्रमकर-
स्थितां त्वां ये ध्यायन्त्युदयति न तेषां परिभवः ॥

(४८)

मुकुट बिराजै चन्द्रखण्ड का शरद शशी सी उज्ज्वल हैं ।
कलश, कमल, वर, अभय करों में, श्वेत वस्त्र अति निर्मल हैं ॥
भूषणभूषित, मकर-वाहिनी गंगा का जो ध्यान धरें ।
विजयी हों वे सदा जगत में, कभी पराजय से न डरें ॥

(४९)

दरस्मितसमुल्लसद्ददनकान्तिपूरा मृतै-
र्भवज्वलनभर्जिताननिशमूर्जयन्ती नरान् ।
चिदेकमयचन्द्रिकाचयचमत्कृतिं तन्वती
तनोतु मम शन्तनोः सपदि शन्तनोरंगना ॥

(४९)

ज्ञानचन्द्रिका तेरी जग में चमत्कार है दिखलाती ।
मन्द मन्द मुसकान तुम्हारी शान्ति-नीर है बरसाती ॥
महाराज शन्तनु की प्यारी करुणा करके दुःख हरो ।
माता, इस संसार-दग्ध के तन का अब कल्याण करो ॥

[२६]

(५०)

मन्त्रैर्मौलितमौषधैर्मुकुलितं

त्रस्तं सुराणां गणैः ।

स्त्रस्तं सान्द्रसुधारसैर्विगलितं

गारुत्मतैर्ग्रावभिः ॥

वीचिच्छालितकालियाहितपदे,

स्वर्लोककल्लोलिनी ।

स्वं तापं शमयाधुना मम भव-

व्यालावलीढात्मनः ॥

(५०)

स्वर्ग विहार करो तुम माता, विष्णु-चरण तुमने धोया ।

शान्त करो सब ताप दीन भव-अहि-दंशन से रोया ॥

ऐसा दुस्सह ताप चढ़ा, जिसने घमंड सबके मेटे ।

मन्त्रौषधि, मुर, सुधा, गरुड़ भी तेजहीन हैं हो बैठे ॥

(५१)

द्यूते नागेन्द्रकृत्तिं प्रमथफणिगण-

श्रेणिनन्दीन्दुमुख्यम् ।

सर्वस्वं हारयित्वा स्वमथपुरभिदि-

द्राक्पणीकर्तुं कामे ॥

साकूतं हैमवत्या मृदुलहसितया
वीक्षितायास्त्वयाम्ब ।
व्यालोलोल्लासिवल्गल्लहरिनटघटी-
ताण्डवं नः पुनातु ॥

(५१)

गौरी के सँग जुआ खेलते शिवजी जब सब हार गये ।
नन्दी, चन्द्र गँवाकर तुमको बदने को तैयार भये ॥
शिव व्यङ्ग कर हँसीं, तुम्हारे हुआ रोष उठों लहरें ।
नृत्य वही चंचल लहरों के जगन्नाथ को शुद्ध करें ॥

(५२)

विभूषितानङ्गरिपूतमाङ्गा
सद्यः कृतानेकजनार्तिभङ्गा ।
मनोहरोत्तुङ्गचलत्तरङ्गा
गङ्गाममाङ्गान्यमली करोतु ॥

(५२)

किया विभूषित शिवमस्तक, जिन पापीजन सब तारे हैं ।
ध्यान धरा श्रीगंगाजी का जागे भाग्य हमारे हैं ॥
दीन दास को पाय तुरत वैभव विलास जो घर भर दें ।
ऊँची सुन्दर लहरें उनकी अङ्गों को पवित्र कर दें ॥

[२८]

(५३)

इमां पीयूषलहरीं जगन्नाथेन निर्मिताम् ।
यः पठेत्तस्य सर्वत्र जायन्ते सर्वसम्पदः ॥

(५३)

‘गंगालहरी’ निर्मित की श्रीपंडितराज महाशानी ।
जगन्नाथ था नाम आपका विद्वत्ता थी लासानी ॥
गंगा के इस सिद्ध स्तोत्र का बुद्धिमान जो पाठ करे ।
सभी जगह हर्षित हो उसके गंगा माई टाठ करे ॥

—————

पं० राधेलाल त्रिवेदी की अन्य पुस्तकें

अमृत गुटका

इसमें भक्तिभाव से श्रोत-प्रोत मनोहर स्तुतियाँ हैं।
जैसे वंशीधर की घर-घर में रासलीला, गीतासार,
हरिस्थापना, गुरु उपदेश, त्रिवेणी स्नान, बेलौन भवानी,
शिव-दर्शन, शिवाष्टक आदि। मूल्य ३)

कीर्तन महात्म

इसमें नाम संकीर्तन का प्रत्यक्ष फल, राम भगवान् का
स्वरूप, भक्ति की महिमा, रामनाम का महत्त्व, आदि
गंभीर विषय सुललित छन्दों में वर्णित हैं। मूल्य ३)

श्रीब्रह्माक्षर प्रकाश

अथवा

हिन्दी शॉर्टहैंड मैनुअल

पिट्मैन सिस्टम का सरल हिन्दी अनुवाद है। यह
पुस्तक यू० पी० बोर्ड तथा राजपूताना यूनिवर्सिटी से
इन्टरकोर्स के लिये स्वीकृत है। ब्रह्माक्षर ॐ से हिन्दी
शॉर्टहैंड का बड़ा मनोरञ्जक सम्बन्ध दिखलाया गया है।
मूल्य ४) कुन्जी १॥)

मैनेजर—

(राजा) रामकुमार-प्रेस बुकडिपो,

उत्तराधिकारी—नवलकिशोर-प्रेस, बुकडिपो, लखनऊ.